4

आदर्शोन्मुख यथार्थ की अभिव्यक्ति 'जनेऊ और मोची ठाकुर'

हिंदी कहानी का उद्‌भव बीसवीं सदी में हुआ। हिंदी कहानीकारों में प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन 'अज्ञेय', जैनेन्द्र, यशपाल आदि ने हिंदी कहानी को समृद्ध बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हिंदी कहानी ने आंदोलन के रूप में 'नई कहानी' से लेकर 'अकहानी', 'सचेतन कहानी', 'सहज कहानी', 'समांतर कहानी', 'सक्रिय कहानी' और 'समकालीन हिंदी कहानी' तक की विकास–यात्रा की है। बीसवीं सदी के अंतिम दशक में आंबेडकरवादी कहानी का अस्तित्व प्रकाश में आया। आंबेडकरवादी कहानीकारों में मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि और डॉ. जयप्रकाश कर्दम आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इसी श्रृंखला में एक नाम श्यामलाल राही 'प्रियदर्शी' जी का भी है। राही जी का कहानी–संग्रह 'जनेऊ और मोची ठाकुर' वर्ष 2014 में लता साहित्य सदन, गाजियाबाद से प्रकाशित हुआ। इस संग्रह में कुल सत्रह कहानियाँ हैं। राही जी ने 'अपनी बात' शीर्षक के अंतर्गत अपनी कहानियों के बारे में लिखा है, 'इलाहाबाद प्रवास की अवधि में लगभग एक माह में ये कहानियाँ लिखी गई थीं। अधिकांश कहानियाँ ग्रामीण अंचल की हैं। अधिकतर कहानियों का कथानक सत्य है, केवल स्थान व नाम परिवर्तित हैं। आप इन्हें सत्य कथाएँ कह सकते हैं।'[1] राही जी की कहानियों में आर्थिक शोषण, छुआछूत, जातिभेद, जीवन–संघर्ष, राजनीतिक प्रपंच, पारिवारिक विघटन, अवैध यौन–संबंध, सामाजिक क्रांति आदि सभी का यथार्थ समाविष्ट है। उनके कहानी–संग्रह 'जनेऊ और मोची ठाकुर' में संग्रहीत संपूर्ण कहानियों का समालोचनात्मक परिचय यहाँ प्रस्तुत है।

1. जनेऊ – 'जनेऊ' कहानी का कथानक यह है कि हरिदीन मिश्र और गंगाचरण शुक्ल दोनों एक–दूसरे के प्रतिद्वंद्वी थे। दोनों चरनोखवा गाँव में रहते थे। उसी गाँव में लड़ैते नाम का एक मेहतर भी रहता था। उसकी दूसरी

पत्नी रेशमा बहुत सुंदर थी। हरिदीन और रेशमा में अवैध संबंध स्थापित हो गया और उनका यह सिलसिला लंबे समय तक चलता रहा। जब गंगाचरण शुक्ल को इस बात की भनक लगी, तो वह हरिदीन से बदला लेने का उपाय किया। गंगाचरण ने नमक–मिर्च लगाकर उनके अवैध–संबंध के बारे में गाँव भर में प्रचार कर दिया। परिणामतः पंचायत बुलाई गयी। पंचायत के एक दिन पहले हरिदीन ने रेशमा से कहा था, 'किसी प्रकार मेरी इज्जत बचाओ रेशमा! वरना मैं तो गंगा में डूबकर अपनी जान दे दूँगा।'[2] रेशमा ने बचाव का उपाय ढूँढ लिया था। पंचायत वाले दिन उसने पंचों के सामने कहा, 'यहाँ पंचायत में जो–जो पंच बैठे हैं, वे मुझे अच्छी तरह जानते हैं। मुखिया जी तथा पंडित गंगाचरण भी मुझे खूब जानते–पहचानते हैं। उन्हें मालूम है कि मैं अपने साथ संबंध बनाने वाले बामनों का जनेऊ उतार लेती हूँ। अतः मैं कुछ कहना नहीं चाहती हूँ।'[3] यह कहकर उसने अपनी काँख से जनेऊ का एक बंडल पंचायत के बीच फेंककर कहा, 'सब पंच इसमें से अपना–अपना जनेऊ पहचान लें।'[4] दरअसल, सभी पंचों का रेशमा से अवैध–संबंध था। राही जी की कहानी 'जनेऊ' एक ओर तथाकथित ब्राम्हणों के दोहरे चरित्र का अनावरण करती है, तो दूसरी ओर वंचित वर्ग की एक महिला की निर्भीकता और बुद्धिमानी को उजागर करती है। तथाकथित ब्राह्मण छुआछूत, जातिभेद का व्यवहार करते हैं, लेकिन किसी निम्न जाति की महिला से यौन–संबंध बनाने में संकोच नहीं करते हैं। इस प्रकार वे केवल पवित्रता का ढोंग करते हैं।

2. चित्त भी मेरी पट्ट भी मेरी – 'चित्त भी मेरी पट्ट भी मेरी' कहानी में तीन प्रमुख पात्र हैं – तौले भुर्जी, कामता धोबी और ठाकुर सतवीर सिंह। तीनों के मकान आस–पास ही थे। ठाकुर सतबीर सिंह गाँव का सबसे बड़ा जमींदार था। उसका ऐसा दबदबा था कि लोग उसके कुकर्म को जानकर और देखकर भी उसके सामने बोलने का साहस नहीं करते थे। ठाकुर की उम्र पचास वर्ष थी। एक दिन कामता धोबी की लड़की छुटनी ठाकुर की हवेली में अपनी माँ के साथ धुले हुए कपड़े देने गयी। जब ठाकुर ने उसे देखा, तो उसकी पुष्ट और सुंदर काया को देखकर आकर्षित हो गया। कुछ ही दिनों बाद ठाकुर ने मौका पाकर कामता के घर में ही छुटनी की अस्मत लूट ली। उसके बाद ठाकुर की जब भी इच्छा होती, वह कामता के घर चला जाता। भय के कारण घरवाले इधर–उधर हो जाते और वह छुटनी के साथ दुष्कर्म करता। अंततः कामता ने तौले की सलाह मानकर छुटनी की शादी दूर इलाके में कर दी और उसे वापस गाँव में न बुलाने की कसम खा ली। कई वर्ष बीत गये। ठाकुर ने अपने दोनों लड़कों और चारों लड़कियों का विवाह कर दिया।

उसकी छोटी लड़की मालती का पति विवाह के दो महीने बाद ही हत्या के केस में जेल चला गया। उसे उम्र कैद की सजा हो गयी। चूँकि मालती के सास–ससुर मर चुके थे और मालती का पति वीरेंद्र उनका इकलौता लड़का था, इसलिए मालती अपने मायके में आकर रहने लगी। तौले भुर्जी का लड़का बनवारी और कामता धोबी का लड़का सुखराम हमउम्र थे। वे तौले भुर्जी के घर की बगल में भाड़ वाले छप्पर में रात को एक साथ सोते थे। गर्मी का मौसम था। मालती आधी रात को जाकर सुखराम की चारपाई पर लेट गयी और उसे अपनी बाँहों में भर ली। नींद टूटने पर जब सुखराम ने विरोध किया, तो वह इच्छापूर्ति न करने पर बलात्कार का आरोप लगाने की धमकी देने लगी। अंततः दोनों में यौन–संबंध स्थापित हो गया। उसके बाद मालती और सुखराम प्रायः मिलने लगे। एक रात जब मालती सुखराम से मिलकर लौटी, तो उसकी माँ ने उसे ऊँच–नीच और मर्यादा का उपदेश देना आरंभ किया। प्रत्युत्तर में मालती ने भी अपनी माँ को उसके कुकर्म की कथा सुना दी। श्यामलाल राही जी ने अपनी इस कहानी में संवादों को यथार्थ रूप प्रदान करते हुए बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। मालती और उसकी माँ के बीच हुआ वार्तालाप अवलोकन करने योग्य है। यथा :

'अपने पर संयम रख नालायक ! तुझे ठकुरानी होकर उस धुबेले के लौंडे से रंगरेलियाँ मनाते शर्म नहीं आती?'

'इसमें शर्म की क्या बात है? जब ठाकुर हमारा बप्पा, गाँव की चमार, चूहड़ी, डोमनी तथा धोबिनियों से अपना मुँह काला करता है, तब कहाँ चली जाती है तेरी ठकुरानी? उसे तू क्यों नहीं रोकती?'

'अरे कलमुही ! मुँह को लगाम दे। अपनी जवानी को काबू में रख।'

'तू अपना बुढ़ापा तो काबू में रख नहीं पाती। कैसे बप्पा के साथ रात–रात भर उधम मचाती है? और जिस दिन बप्पा नहीं रहता, उस दिन तू उस रघुवा चमार के साथ इस बुढ़ापे में जो कलाबाजियाँ करती है, वह क्या मैं नहीं जानती?'[5]

उस दिन के बाद तो मालती ने सुखराम से खुलेआम मिलना आरंभ कर दिया। चूँकि ठाकुर वृद्ध, अस्वस्थ और दुर्बल था, इसलिए वह विवश भी था। लेकिन ठाकुर का छोटा भाई उदयवीर उग्र स्वभाव का था। उसने सुखराम को जान से मारने का निश्चय किया। ठाकुर को डर था कि यदि सच में उदयवीर अपने संकल्प को पूरा कर देगा, तो उसे पूरी उम्र जेल में गुजारनी पड़ेगी। श्यामलाल राही जी ने ठाकुर की संतान–प्रेम से उत्पन्न विवशता का करुण चित्रण किया है। उनके शब्दों में, 'एक बाप अपनी ही संतान के आगे

कितना विवश हो जाता है? यह उन्होंने सुना था, पर आज उसका प्रत्यक्ष अनुभव हो रहा था।'[6] विषम परिस्थिति में भी ठाकुर अपनी जातीय कुटिलता से मुक्त नहीं हुआ। उस स्थिति में उसने राजनैतिक दाँव–पेच का प्रयोग करना उचित समझा। एक दिन ठाकुर ने तौले और कामता को बुलाकर कहा, 'तुम जानते ही हो, उदयवीर गुस्सैल तो है ही, खून से भी नहीं डरता। अब अगर तुम्हारे लड़कों के साथ उसने कुछ ऐसा–वैसा कर दिया, तो फिर यह न कहना कि ठाकुर ने तुम्हें सावधान नहीं किया।'[7] तौले और कामता के यह पूछने पर कि 'हम क्या करें ठाकुर?' उसने उन्हें गाँव छोड़कर रातों–रात भाग जाने की सलाह दी। अंततः तौले और कामता सपरिवार गाँव छोड़कर भाग गये और ठाकुर ने उन दोनों के घर पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार ठाकुर ने 'चित्त भी मेरी पट्ट भी मेरी' की कहावत को चरितार्थ किया। इस कहानी के माध्यम से राही जी ने इस बात की ओर संकेत किया है कि तथाकथित सवर्ण किसी भी स्थिति में अपना अहित नहीं चाहते हैं। वे प्रतिकूल परिस्थिति में भी अपनी स्वार्थसिद्धि का उपाय खोज ही लेते हैं। अतः वंचित वर्ग के लोगों को सदैव उनसे सावधान रहने की आवश्यकता है।

3. मछली – 'मछली' कहानी स्वतंत्रता के पंद्रह वर्ष बाद की ग्रामीण परिवेश की कहानी है। इस कहानी के माध्यम से श्यामलाल राही जी ने उस समय ठाकुरों द्वारा उपेक्षित वर्ग के लोगों का शोषण किये जाने का यथार्थ चित्रण किया है। रामखेलावन की पत्नी द्रौपदी को पाँच महीने का गर्भ था। रामखेलावन शाकाहारी था, लेकिन उसकी पत्नी माँसाहारी थी। द्रौपदी को माँसाहार में मछली सबसे अधिक पसंद थी। अपनी पत्नी की इच्छा पूरी करने के लिए रामखेलावन कभी–कभी रोहनी बाजार से मछली खरीद कर ले आता था। उसके गाँव में 'देवी की तलैया' के नाम से प्रसिद्ध एक तालाब था, जो दस एकड़ में फैला था। गाँव के ठाकुर को जब भी आवश्यकता पड़ती, वह छीपरी से मछलियाँ पकड़वा लेता था और वर्ष में एक बार चैत्र या वैशाख के समय पूरे गाँव को मछली का शिकार करने की अनुमति देता था। एक बार जब गाँव के सभी लोग तालाब में मछली पकड़ रहे थे, तो एक बड़ी मछली 'लाची' रामखेलावन की टपार में आकर फँस गयी। गाँव की परंपरा के अनुसार हर शिकारी को अपनी मछलियाँ ठाकुर को दिखानी पड़ती थीं, जिसमें से ठाकुर अपनी इच्छानुसार मछली ले लेता और शेष मछलियाँ शिकारी आसामी को दे दी जाती। इसलिए रामखेलावन ने उस मछली को अपनी पत्नी द्रौपदी को चोरी से दे दिया, जिसे उसने अपनी घास की टोकरी में छुपा लिया। द्रौपदी ने उस मछली को अपने घर के छप्पर में रख दिया था।

नेकसा नामक एक आसामी ने वह सब देखा था और उसने ठाकुर से इस बात की शिकायत कर दी। शिकार समाप्ति के बाद सबको अपना–अपना शिकार ठाकुर को दिखाने के लिए कहा गया। जब रामखेलावन की बारी आयी, तो ठाकुर ने उसकी मछली देखकर पूछा, 'बस इतनी ही मछली मारी तूने?' रामखेलावन ने आशंकित होकर जवाब दिया, 'जी हाँ ठाकुर।'ठाकुर ने पूछा, 'वह लाँची कहाँ है, जो तेरी बीवी ले गयी?' रामखेलावन ने झूठ बोलते हुए कहा, 'मेरी बीवी कोई लाँची नहीं ले गयी ठाकुर !' तब ठाकुर के इशारे पर नेकसा ने वह लाँची टोकरी से निकालकर उसके सामने प्रस्तुत की। ठाकुर ने कहा, 'मैं इस लाँची को तेरे घर से ले आया हूँ हरामजादे ! झूठ बोला तो गाँ... में लाठी कर दूँगा।'[8] रामखेलावन समझ गया कि चोरी पकड़ी जा चुकी है, यह सब इसी नेकसा की करतूत है। फिर भी उसने यह सोचा कि जमाना बदल गया है, ठाकुर बहुत करेंगे, तो गाली देंगे, एक–दो लात मारेंगे और वह सह लेगा। लेकिन ठाकुर इतना क्रोधित था कि उसने लात–जूतों से रामखेलावन की पिटाई तो की ही, साथ ही उसने क्रूरता की हद पार कर दी। श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'पूरा गाँव तथा बिरादरी के सैकड़ों चमार यह देख रहे थे, पर किसी की उसे बचाने की हिम्मत नहीं थी। द्रौपदी जब वापस पहुँची, तो ठाकुर अपनी दरिंदगी की इंतहा पर था। उसने रामखेलावन के गुदा में सचमुच लाठी घुसेड़ दी थी।'[9] 'मछली' कहानी के द्वारा राही जी ने जमींदार ठाकुरों के शोषक रूप को तो प्रदर्शित किया ही है, साथ ही उन्होंने शोषित वर्ग के लोगों की कायरता, ऐक्यहीनता और चापलूसी को भी रेखांकित किया है। यदि नेकसा चमचागिरी का व्यवहार नहीं करता, तो रामखेलावन की चोरी पकड़ी नहीं जाती और द्रौपदी की मछली खाने की इच्छा भी पूरी हो जाती।

4. मेरी जाति – 'मेरी जाति' कहानी में जीवनलाल एक जाटव जाति का व्यक्ति था, जो सुमेरपुर गाँव का निवासी था। उसके गाँव में किसी भी जाति का कोई भी व्यक्ति दसवीं से आगे नहीं पढ़ पाया था, लेकिन वह पढ़ध्कर डिप्टी कलेक्टर हो गया था। उसने गढ़वाल में डीएम के यहाँ कार्यभार ग्रहण किया। जगदीश सिंह राणा वहाँ डीलिंग क्लर्क थे। श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'गढ़वाल में परंपरा के अनुसार भारतीय संविधान में वर्णित अनुसूचित जाति के सारे ही लोग हरिजन कहे जाते हैं। उसी के अनुसार जीवन का 'जाटव' जाति का प्रमाणपत्र देखने के बाद जगदीश सिंह राणा ने उसकी सेवा पुस्तिका के कॉलम में जाति के स्थान पर हिंदू (हरिजन) लिखा।'[10] दो–तीन वर्ष के बाद उसका स्थानांतरण मुरादाबाद हो गया। वहाँ एक दिन खड्गसिंह बैंनीवाल नामक आकर्षक व्यक्तित्व का व्यवहार–कुशल

नेता उससे मिलने आया। कार्यालय के बड़े बाबू करन सिंह ने सबसे उसका परिचय कराया। बैंनीवाल के जाने के बाद बड़े बाबू ने जीवनलाल को बताया कि 'साहब बैंनीवाल भंगियों के नेता हैं, कांग्रेसी हैं। उनका मुख्य काम एस. सी. अफसरों के यहाँ हाजिरी बनाना है तथा अपने काम निकलवाने हैं। आप भी चूँकि एस.सी. हैं, इसलिए यह आपसे मिलने आये हैं। अब यह प्रायः मिलने आया करेंगे।'[11] जीवनलाल की सेवा पंजिका एल.पी.सी. कार्यालय में जमा थी। एक दिन डीलिंग क्लर्क की निगाह अनायास जाति के कॉलम पर चली गयी। चूँकि श्यामलाल राही जी स्वयं शिक्षा–प्रशासनिक विभाग में डिप्टी के पद पर सेवा दे चुके हैं तथा उन्होंने स्वयं अधिकारियों के बीच होने वाले ऊँच–नीच के व्यवहार का अनुभव किया है, इसलिए उन्होंने स्वानुभूति को सहानुभूति से जोड़कर कहानी श्मेरी जातिश में अधिकारी पात्रों की भावाभिव्यक्ति की है। राही जी ने लिखा है, 'यों भी जब कोई अधिकारी कहीं जाता है, तो उसके अधीनस्थ, स्थानीय नेता सबसे पहले उसकी जाति ही पता करते हैं।'[12] राही जी के शब्दों में, 'बिना किसी प्रचार–प्रसार के एक के मुँह से दूसरे तक पहुँचते–पहुँचते यह बात पूरे जिले में फैल गयी कि जीवनलाल हरिजन (भंगी) हैं। यह खबर जब खड्ग सिंह बैंनीवाल तक पहुँची, तो वह बहुत प्रसन्न हुये। उनकी समझ में बरसों बाद बिरादरी का कोई अफसर जिले में आया था।'[13] संवैधानिक रूप से अनुसूचित जाति के अंतर्गत सम्मिलित उपजातियों के लोगों के बीच में भी जातिगत भेदभाव देखने को मिलता है। जीवनलाल और खड्गसिंह के बीच हुआ यह संवाद अवलोकन करने योग्य है। जगजीवन लाल ने खड्ग सिंह से बड़े बाबू को ही कागजात देने को कहा, तो वह बोला, 'साहब ! बड़ा बाबू तो साला चमार है। ये चमार तो सब जगह छाये हैं। उन्हीं के अफसर हैं, उन्हीं के नेता हैं। बड़ा बाबू तो चमार का यहाँ लीडर है। वह यह कागज कहीं खो देगा। वह करेगा तो चमारों के करेगा, हमारा थोड़े ही।'[14] जीवनलाल यह सुनकर सन्न रह गए उन्हें भारतीय जाति व्यवस्था के दुष्परिणाम का अनुभव हो गया। उन्होंने कहा, 'आप ठीक कह रहे हैं बैंनीवाल साहब ! लाइए मैं ही रख लेता हूँ।' यह कहकर उन्होंने कागज अपने पास रख लिया। कार्यालय से बाहर निकलते ही खड्ग सिंह को एक जाटव नेता मिल गये। दोनों आपस में परिचित थे। जाटव नेता ने उनसे पूछा, 'कैसे आये थे?' खड्ग सिंह ने कहा, 'साहब से थोड़ा काम था। वर्षों बाद तो कोई भंगी अफसर आया है, वरन् तो आपकी बिरादरी ही छाई रहती है। अब हम भी कुछ काम करा लेते हैं।' इस पर जाटव नेता बोले, 'यह आप क्या कह रहे हैं? साहब तो वाल्मीकि नहीं हैं, वह तो जाटव हैं और भाई ! दूर के रिश्ते में हमारे

साले लगते हैं।'[15] राही जी के शब्दों में, 'जब खड्ग सिंह बैंनीवाल को विश्वास हो गया कि लाल जाटव हैं, न कि वाल्मीकि, तब वह दोबारा कभी उनसे मिलने नहीं गये।'[16] श्यामलाल राही जी की कहानी 'मेरी जाति' को पढ़कर निश्चित रूप से वाल्मीकि जाति के लोगों को अपमान का अनुभव होगा और उनकी जातीय कुंठा उग्र व्यवहार के रूप में प्रदर्शित होगी, लेकिन उन लोगों को इस कहानी की आलोचना अथवा विरोध करने से पहले ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'शवयात्रा' का एक बार अवलोकन अवश्य कर लेना चाहिए। क्योंकि 'शवयात्रा' कहानी में ओमप्रकाश वाल्मीकि ने चमारों को अत्यधिक क्रूर, संवेदनाहीन और सहयोगरहित जाति के रूप में प्रदर्शित किया है। जबकि उनकी कल्पना यथार्थ के बिल्कुल विपरीत है। श्यामलाल राही जी की कहानी 'मेरी जाति' में तो फिर भी अत्यधिक यथार्थ का समावेश है।

5. फैसला – 'फैसला' कहानी का नायक रामवीर है। वह कुशाग्र–बुद्धि तथा मेधावी था। श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'उसकी बिरादरी के लोग मृत पशुओं का माँस खाना तो एक अरसे पहले छोड़ चुके थे। पर सामंती वर्ग द्वारा ली जाने वाली बेगार तथा जोर–जबरदस्ती से मृत पशुओं को खींचना तथा उनका चमड़ा उतारना जैसी घृणित प्रथाएँ अब भी समाज में थीं।'[17] कठिन परिश्रम और पढ़ाई करके रामवीर राजस्व सेवा में अधिकारी के पद पर नियुक्त हो गया था। फाल्गुन का महीना था। होली का त्यौहार आने वाला था। उसने होली से पहले कुछ अवकाश ले लिया था। चूँकि सामाजिक नेतृत्व करने के कारण उसके क्षेत्र के अनेक लोग उसके प्राण के शत्रु थे और अवसर पाकर कुछ भी कर सकते थे, इसलिए उसके पिता ने उससे कहा था कि 'अब तुम्हें यहाँ आने की आवश्यकता नहीं है।'यही कारण था कि रामवीर ने होली अपनी ससुराल में मनाने का निश्चय किया था। वह ससुराल पहुँच गया। अगले दिन मौसम अचानक बदल गया और ठंड बढ़ गयी। शाम से कुछ समय पहले उसने देखा कि उसके बड़े साले कुएँ पर स्नान कर रहे थे। उसके साले लगभग बूढ़े हो चुके थे तथा सर्दी, बुखार से परेशान थे। फिर भी जाड़े में असमय स्नान कर रहे थे। रामवीर ने एक ग्रामीण से इसका कारण पूछा। राही जी के शब्दों में, 'उसने बताया कि पड़ोसी पंडित की गाय मर गई थी। उसी को खींचकर गाँव से बाहर ले गये थे। मुहल्ले के लोगों ने आपके डर से उसकी खाल तो नहीं उतारी, उसे गड्ढा खोदकर गाड़ दिया। इसी से नहा रहे हैं।'[18] चूँकि स्वतंत्रता के पश्चात अधिकांश गाँव वालों ने इस शोषण से मुक्ति पा ली थी। फिर भी अभी तक वह गाँव उसका शिकार था। रामवीर ने इस शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने का निश्चय किया। शाम को जब उसके बड़े

साले भोजन के लिए बुलाने आये, तो वह भोजन करने से मना कर दिया। जब उसकी सलहज हँसी–ठिठोली करने लगी, तो अपने रूठने का कारण बताते हुए उसने अंत में अपने साले जी से कहा, 'मैं रूठा इसलिए हूँ कि आप उस गंदगी तथा शोषण को अब तक स्वीकार किये हुये हैं।'उनकी बात पूरी समाप्त नहीं हुई थी कि मुहल्ले के चार नौजवान वहाँ उससे मिलने आ गये। उन्होंने रामवीर की अंतिम बात सुन ली। उन नौजवानों में से जंजाली नाम के एक नौजवान और रामवीर के बीच संवाद होने लगा। जंजाली ने कहा–

'यह तो हमारे गाँव में सालों से चला आ रहा है। अब कोई न तो माँस खाता है, न चमड़ा उतारता है। हाँ, गाँव से खींचकर बाहर ले जाकर गाड़ अवश्य देते हैं।'

'यह सब भी क्यों करते हैं? क्या वे लोग यह काम स्वयं नहीं कर सकते?'

'कर तो सकते हैं, पर लोगों के पास ज्यादा जमीन–जायदाद तो है नहीं। जीवन–निर्वाह के लिए उन पर आश्रित रहना पड़ता है। इसलिए यह मजबूरी है।'

'कोई मजबूरी नहीं, यह बुजदिली है। जब तक हम दबते रहेंगे, हमें दबाया जाता रहेगा।'[19]

उसके बाद उस नौजवान ने गाँव के अन्य लोगों को भी इकट्ठा किया और सबके साथ उस घृणित काम को न करने का संकल्प लिया। श्यामलाल राही जी ने इस कहानी में नायक रामवीर के क्रांतिकारी, दृढ़–संकल्पी, साहसी और संघर्षशील चरित्र का मार्मिक चित्रण किया है। उनकी यह कहानी वंचित वर्ग के लोगों को स्वाभिमान से जीने के लिए सामाजिक परिवर्तन करने की प्रेरणा देती है। साथ ही लेखक ने उस सामाजिक यथार्थ की ओर भी संकेत किया है, जिससे अनेक क्रांतिकारी समाज सेवकों एवं सच्चे नेताओं का स्मरण होता है। क्योंकि वंचितों के जीवन में जो सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और वैचारिक परिवर्तन हुआ है, उसमें अनेक संघर्षशील और समर्पित सज्जनों का सहयोग रहा है। किसी नायक के पीछे चलने वाले उसके समर्थकों का उस नायक के कार्य की सफलता में महत्वपूर्ण योगदान होता है। राही जी की इस कहानी 'फैसला' के नायक रामवीर के समर्थन में यदि जंजाली और अन्य युवक खड़े नहीं होते तो, वह अपनी हठ को पूरा करने में सफल नहीं हो पाता। इसलिए जंजाली सहित उसके साथी युवकों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण एवं सराहनीय है।

6. विशेसर पंडित – विशेसर पंडित को पूरा मोहनपुर पंडित के नाम

से जानता था। पंडित जी कोई कुलीन ब्राह्मण नहीं थे। उनकी नानी गड़रिया थी और दादी कहारिन। पंडित जी का घर चमारों के मोहल्ले से मिला हुआ था। पंडित जी का परिचय देते हुए श्यामलाल राही जी ने लिखा है, 'वह माँसाहारी थे तथा शराब भी उन्हें अप्रिय नहीं थी। माँस खाने की तो उनकी इतनी ललक थी कि वह बचपन में चमारों के घर में घुस जाते और माँगकर या फिर एक बार जबरदस्ती उनके घरों में पक रहे मरे हुए पशुओं के माँस को बड़े चाव से खाते।'[20] पंडित जी जाति–पांति ऊँच–नीच में विश्वास नहीं करते थे। उन्हें ऊँट पालने का शौक था, क्योंकि यही वह जानवर था, जिसकी देखभाल उन्हें कम से कम करनी पड़ती थी और लाभ अधिक होता था। जबसे उनकी शादी हुई थी, तबसे गाँव भर के कुँवारे नौजवान उनके घर डेरा जमाये रहते थे। विशेसर पंडित की पत्नी यानी पंडिताइन की चारित्रिक विशेषताओं का परिचय देते हुए राही जी ने लिखा है, 'चरित्र के मामले में पंडिताइन बहुत उदार थीं। बूढ़े पंडित से उनका बस सामाजिक रिश्ता भर था। वह अपनी आर्थिक, शारीरिक जरूरतों के लिए इन्हीं गाँव के नौजवानों पर निर्भर थीं। इस मामले में न तो नौजवान उन्हें निराश करते थे और न पंडिताइन।'[21] चूँकि चमार टोले के तीन–चार लड़के पंडिताइन से कुछ अधिक ही नेह लगा रखे थे, इसलिए ठाकुरों के लड़कों को यह अच्छा नहीं लग रहा था। अमावस्या के दिन चमारों और ठाकुरों के लड़के आपस में वाद–विवाद करते हुए लड़ बैठे। दोनों ओर से लाठियों का प्रहार होने लगा। उसी समय ठाकुरों ने चमारों के मुहल्ले में आग लगा दी। पंडित जी के घर में भी आग लग गयी। पंडिताइन गर्भवती थीं। पंडिताइन किसी प्रकार घर से बाहर आ गयीं, लेकिन उनके कपड़े और रुपए घर के अंदर थे। इसलिए पंडित जी उन्हें लेकर घर से बाहर कमरे में ज्यों ही आये थे, त्यों ही जलता हुआ छप्पर उनके ऊपर गिर पड़ा। आग फैलती हुई ठाकुरों के घरों में भी जा लगी थी। चूँकि चमारों के लड़के परिश्रमी थे, इसलिए उन्होंने पड़ोस के तालाब से पानी लाकर अपने घरों को जलने से बचा लिया। लेकिन ठाकुरों के मकान जलकर नष्ट हो गये। चमारों के लड़कों ने पंडित जी को भी जलने से बचा लिया था, इसलिए पंडित जी जीवन भर चमारों को अपना परिवार मानते रहे। श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'वह कहा करते थे, मैं तो पैदा सिर्फ ब्राह्मण के घर हो गया, वैसे तो पूरा चमार हूँ।'[22] अपनी कहानी 'विशेसर पंडित' के माध्यम से राही जी ने इस तथ्य को उजागर करने का प्रयास किया है कि सभी ब्राह्मण एक जैसा व्यवहार नहीं करते हैं। ब्राह्मणों में भी कुछ ऐसे हैं, जो चमारों के साथ बिल्कुल सगे भाई की तरह व्यवहार करते हैं। भोजपुरी में एक कहावत

है – 'बाभन, चमार भाई–भाई, आउर जाति कहाँ से आई।' अतः ब्राह्मणवाद का विरोध करने वाले वंचित वर्ग के लोगों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वे केवल 'ब्राह्मणवाद' का विरोध करें, ब्राह्मणों का नहीं। प्रेम और सहयोग से किसी भी व्यक्ति का हृदय परिवर्तन किया जा सकता है। यह कहानी इसी बात का एक उदाहरण है।

7. महतैन – 'महतैन' कहानी की मुख्य नायिका कोकिला है। वह भूपति लोधी की पत्नी थी। सलेमपुर गाँव के निवासी भूपति लोधी के पास अच्छी जमीन थी। उसके दो आमों के बाग थे, शीशम के पचास पेड़, सोलह जामुन और अट्ठारह नीम के पेड़ थे। घर पर चार भैंसें, सोलह गायें तथा दो जोड़ी बैल थे। एक दिन भूपति अपने बैलों को तालाब में नहला रहा था। तालाब गहरा था। अचानक बैल भड़क गया और बैल की रस्सी उसके पैरों में उलझ गयी। भूपति पानी में गिर गया। दूसरा बैल भड़का और अपने पैरों से पानी में गिरे भूपति को कुचल डाला। तत्काल भूपति की मृत्यु हो गयी। तीन बच्चों की माँ विधवा कोकिला अत्यंत सुंदर थी। गाँव के अधिकांश विवाहित और अविवाहित किसान उसे पसंद करते थे। कोकिला ने भी उनके सामने अपना हृदय खोल कर दिया। परिणामस्वरूप कई लोगों के साथ उसके यौन–संबंध बन गये। जब कोकिला ठाकुर शिवपूजन सिंह से संबंध बन गया, तो वह ठाकुर के घर आकर रहने लगी। क्योंकि ठाकुर की पत्नी पंडित गौरीशंकर के साथ भाग गयी थी। कोकिला को पूरा गाँव 'महतैन' के नाम से पुकारने लगा था। ठाकुर के घर आने पर महतैन को एक लड़का हुआ था, जो दुबला–पतला था और उसका रंग भी साफ नहीं था। उसका नाम पूरन सिंह था। एक लोधिन के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण किसी ठाकुर ने उसे अपनी लड़की नहीं दी। इसलिए उसकी उम्र पचास वर्ष हो गयी, फिर भी वह अविवाहित था। जब ठाकुर ने अपनी जमीन अपने भतीजों के नाम कर दी, तो पूरन सिंह को पूरा विश्वास हो गया कि वह ठाकुर का बेटा नहीं है। वह निशिदिन शराब पीने लगा। ठाकुर की मृत्यु के बाद बूढ़ी महतैन मालकिन थी, इसलिए पूरन सिंह शराब के लिए उससे पैसे माँगता। जब वह पैसे नहीं देती, तो घर का सामान बेचकर शराब पीता। शराब के नशे में वह महतैन से अपने बाप का नाम पूछता, 'बता मेरा बाप कौन है? जब तेरे खुजली पड़ती थी, तो कहाँ–कहाँ जाकर मुँह काला करती थी? कितने तेरे यार थे?' [23] बूढ़ी महतैन चमारों को तरह–तरह से परेशान करती थी। वह ठकुराइन होने के अहंकार में रहती थी। पूरन सिंह जब शराब के नशे में महतैन को मारता–पीटता था, तो वह लहँगे में ही पेशाब–पखाना कर देती थी और चमार औरतों से उसे

साफ करने की विनती करती थी। जब उसका काम निकल जाता, तो वह पुनः अपने पूर्वरूप में हो जाती। एक दिन जब महतैन बीमार थी, तो पूरन सिंह उसे पीटकर उसके गहनों और पैसों की पोटली लेकर चला गया। उधर वह हफ्ते भर तक घर से गायब रहा, इधर महतैन घर में दवा के बिना मर गयी। न चाहते हुए भी बुजुर्गों के कहने पर चमारों के कुछ लड़कों ने महतैन की लाश को शमशान में गड्ढा खोदकर चारपाई सहित दफन कर दिया। उस समय पूरन सिंह की क्या स्थिति थी? श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'पूरन सिंह दोनों दुनिया से बेखबर शराब के नशे में धुत एक नाली के किनारे पड़ा था।'[24] इस कहानी का ध्यानपूर्वक अध्ययन करने से स्पष्ट है कि इस कहानी में यथार्थवाद और आदर्शवाद का मिश्रण है। कहानीकार श्यामलाल राही जी ने महतैन के दुष्कर्म और उसके दुष्कर्म का परिणाम उसके जीवनकाल में ही प्राप्त होने का वर्णन करके इस यथार्थ को उजागर करने का प्रयास किया है कि बुरे काम का परिणाम बुरा ही होता है। साथ ही राही जी ने चमार जाति के लोगों के कारुणिक ह्रदय और मानवीय व्यवहार की प्रवृत्ति को भी प्रदर्शित किया है।

8. मोची ठाकुर – 'मोची ठाकुर' कहानी का मुख्य पात्र हरपाल सिंह है, जिसे पूरा कस्बा मोची ठाकुर के नाम से जानता था। वह बरगदवा का रहने वाला था। जब उसका परिवार आर्थिक तंगी से जूझने लगा और खाने के लाले पड़ने लगे, तो वह मुंबई में सीखा हुआ मोची का काम शुरू करने के लिए अपने पिता करन सिंह के सामने अपना विचार रखा। उसके पिता ने कहा, 'हम ठाकुर हैं। हम चमारों–मोचियों का काम नहीं करेंगें, चाहे मर जावें।'[25] प्रत्युत्तर में हरपाल सिंह ने कहा, 'पिताजी अब जमाना बदल गया है। जब ठाकुर, ब्राह्मण, बनिए जूतों की दुकान कर रहे हैं, तो फिर इस काम में क्या बुराई है? मैंने यह काम मुंबई में सीखा है, मैं इसे कर अच्छा पैसा कमा सकता हूँ।'[26] इस कहानी का निहितार्थ यही है कि कोई भी पेशा छोटा अथवा बड़ा नहीं होता है। पेशा जीविकोपार्जन का एक माध्यम है। यह अलग बात है कि इस देश में पेशे के आधार पर जातियों का नामकरण हो गया है। जबकि सच्चाई यही है कि वर्तमान में कथित निम्न जाति के लोग उच्च कर्म कर रहे हैं और कथित उच्च जाति के लोग निम्न कर्म करने में लिप्त हैं। युग–परिवर्तन के साथ–साथ लोगों में विचार–परिवर्तन भी हो चुका है। अब तो ब्राह्मण भी सफाईकर्मी का काम करने में संकोच नहीं करते हैं। इस कहानी का नायक हरपाल सिंह मोची का काम करने में तनिक भी लाज नहीं करता है, बल्कि वह जूता गाँठने को एक कला समझता है। हरपाल सिंह का केवल

चरित्र ही क्रांतिकारी नहीं है, बल्कि उसका प्रसिद्ध नाम 'मोची ठाकुर' भी क्रांति का बोध कराता है।

9. एकादशी – 'एकादशी' कहानी में ठाकुर यदुनाथ सिंह बहलोलपुर गाँव का निवासी है। इस कहानी में यदुनाथ का परिचय देते हुए श्यामलाल राही जी ने लिखा है, 'यदुनाथ सिंह पूरे साल धार्मिक कार्यों में व्यस्त रहा करते थे। हर पूर्णिमा, अमावस्या तथा एकादशी को गंगास्नान करते। उनकी पत्नी उनके विपरीत स्वभाव की थी।'[27] ठाकुर का उस पर कोई प्रतिबंध नहीं था। वह क्या करती, कहाँ जाती, क्या खाती, क्या पीती, इससे ठाकुर को कोई सरोकार नहीं था। शादी के कुछ साल तक तो ठुकराइन ने यह सब सहन किया, लेकिन फिर उसका धैर्य छूट गया। उसके पड़ोस में ही उसके जीजा रहा करते थे। एक दिन वह अपने जीजा के घर गई और उन दोनों में प्रेम–संबंध बन गया। उसके बाद हर एकादशी को जब ठाकुर यदुनाथ सिंह गंगास्नान करने के लिए चले जाते, तो ठकुराइन उठकर बाड़े में चली जाती। बाड़े में एक भुसौरी थी, जिसमें वह अपने जीजा के साथ प्रेमक्रीड़ा करती। उनके बीच का यह संबंध कई वर्षों तक चला। गाँव के लोगों का कहना था कि यदुनाथ सिंह तो अपनी पत्नी से कोई संबंध नहीं रखते। ठकुराइन के चार संताने हुईं – तीन लड़कियाँ और एक लड़का। जब ठकुराइन के जीजा की मृत्यु हो गयी, तो उसने ठाकुर से आग्रह करके गाँव के मेहतर बलधारी को अपने घर में नौकर रखवा लिया। एक दिन ठकुराइन ने बलधारी के समक्ष अपना प्रेम–प्रस्ताव रखा। बलधारी ने स्वीकार कर लिया, क्योंकि उसकी पत्नी मायके गयी हुई थी। उस दिन के बाद तो यह एक नियम बन गया। राही जी के शब्दों में, 'हर एकादशी ठाकुर जब प्रातः चार बजे गंगा स्नान करने चली जाते, तो ठकुराइन और बलधारी अपना एकादशी स्नान पशुओं के बाड़े में आकर करते।'[28] बलधारी की पत्नी जब मायके लौटी और उसे पता चला, तो उसने विश्वास नहीं किया, क्योंकि वह स्वयं सुंदर थी। लेकिन एक दिन जब उसने चुपके से बलधारी को घर से बाहर जाते देखा, तो उसका पीछा की और ठकुराइन के घर के बाड़े तक गयी। उसने ठकुराइन और बलदारी को सहवास करते हुए देख लिया। उसने ठकुराइन को गालियाँ देना शुरू किया, लेकिन जब बलधारी ने उसे तलाक देने की धमकी दी, तो वह शांत हो गयी। उसके बाद ठकुराइन और बलधारी निःसंकोच हर एकादशी को प्रेमव्रत का पालन करने लगे। श्यामलाल राही जी के द्वारा लिखी गई कहानी की अंतिम पंक्ति द्रष्टव्य है, 'एक अपना यह जन्म सुधार रहा है, दूसरा अपना अगला जन्म।'[29] यह कहानी 'एकादशी' समाज के उस यथार्थ की ओर इंगित करती

है, जो स्त्री–पुरुष की प्राकृतिक आवश्यकता पर निर्भर है। शारीरिक भूख का तात्पर्य केवल 'पेट की भूख' ही नहीं होता है, बल्कि मनुष्य यौन–तृप्ति के लिए भी भूखा रहता है। जिस संसार (स्वर्ग लोक) को कोई देख नहीं सकता है, जो अलौकिक है, उस संसार में स्थान पाने के लिए भक्ति और धर्म–कर्म करना तथा उसकी स्मृति में लीन रहकर सांसारिक गतिविधियों को विस्मृत कर देना मूर्खता नहीं तो और क्या है? क्योंकि इसका दुष्परिणाम भी प्राप्त होता है। इस कहानी में ठाकुर यदुनाथ सिंह को भी उसकी इस प्रकार की मूर्खता का दुष्परिणाम मिलता है, लेकिन उसे इस बात की तनिक भी चिंता नहीं होती है। उसकी पत्नी बलधारी के साथ काम–क्रीड़ा में लीन रहती है और वह संसारिक घटनाओं को नजरअंदाज करके भक्ति–कर्म में लीन रहता है।

10. बँटवारा – श्यामलाल राही जी की कहानी 'बँटवारा' में प्रमुख नायक पात्र जमींदार महीप सिंह है, जो ग्राम भैसौड़ा का निवासी है। वह दुश्चरित्र, दमन प्रवृत्ति और स्वछंद विचार से युक्त है। उसके तीन लड़के थे – सोमपाल सिंह, सुरेशपाल सिंह तथा सुभाषपाल सिंह। ठाकुर ने बनारस में एक कोठी खरीदा और वहीं पर उसके बच्चे और उसकी पत्नी रहने लगे। ठाकुर महीप सिंह गाँव में अकेले रहता था। उसका कई स्त्रियों से संबंध था। पड़ोसी लाखन खटिक की नई–नवेली दुल्हन से भी उसका संबंध बन गया। कई वर्ष बीत गये। ठाकुर का बड़ा लड़का सोमपाल सिंह जर्मनी चला गया, सुरेशपाल सिंह ने आईसीएस कर लिया और सुभाषपाल सिंह फौज में अफसर हो गया। ठकुराइन का निधन हो गया। ठाकुर महीप सिंह बिल्कुल अकेला हो गया। लाखन खटिक की पत्नी से एक लड़की हुई थी, जो लाखन की लड़की कही जाती थी, लेकिन सारा गाँव जानता था कि वह महीप सिंह की लड़की थी, क्योंकि उसका रंग, रूप, आकार सब ठाकुर के जैसा था। उस लड़की का नाम रानी था। लाखन की पत्नी ठाकुर की हवेली में ही रहने लगी थी। एक दिन लाखन बीमार था, तो उसने अपनी पत्नी को बुलाने के लिए रानी को ठाकुर की हवेली भेजा। रानी जब हवेली गयी, तो उसकी माँ उस समय वहाँ नहीं थी। रानी की सुगठित शरीर को देखकर ठाकुर का मन उसे पाने के लिए विह्वल हो गया। जब रानी की माँ वापस हवेली लौटी, तो उसने ठाकुर से कहा कि 'मैं पति को लेकर मोहनपुर इलाज के लिए जा रही हूँ। रानी यहीं हवेली में आज रात रह जाएगी।'[30] कामातुर ठाकुर ने मौका पाकर अपनी हवेली में ही रानी की अस्मत लूट ली। लाखन को जब पता चला, तो उसे बहुत बुरा लगा। यह बात ठाकुर को भी पता चली। उसने लाखन की

हत्या करवा दी और रानी को जबरदस्ती अपने घर रख लिया। ठाकुर से रानी के तीन लड़के हुये। जब ठाकुर की मृत्यु हो गयी, तो ठाकुर का लड़का सुभाषपाल सिंह अपने पिता की संपत्ति में हिस्सा लेने के लिए गाँव आया। रानी किसी भी कीमत पर अपनी संपत्ति का बँटवारा करने के लिए तैयार नहीं थी। अदालत में मुकदमा चला। सुभाषपाल सिंह की जीत हुई। रानी को यह सब सहन नहीं हुआ। रानी ने भरी अदालत में ही अपने साथ लाया हुआ तमंचा निकालकर सुभाषपाल सिंह को गोली मार दी। वह पागल हो चुकी थी। उसे मजिस्ट्रेट के आदेश पर हिरासत में ले लिया गया। श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'वह जेल में हर किसी से कहती है, मेरी जमीन का बँटवारा नहीं हो सकता। वह हमारी जमीन है, सिर्फ हमारी।'[31] श्यामलाल राही जी ने कहानी 'बँटवारा' में गाँव के जमींदार ठाकुरों की शोषक और दबंग प्रवृत्ति को प्रदर्शित किया है। साथ ही उन्होंने एक निम्न जाति की महिला का ठकुराइन बन जाने के बाद उसमें उत्पन्न साहस को भी उजागर किया है। शोषण और अन्याय की शिकार हुई रानी अपने अधिकारों की रक्षा हेतु भरी अदालत में सुभाषपाल सिंह को गोली मारकर उसकी हत्या कर देती है। यह उसके आक्रोशपूर्ण विद्रोहात्मक प्रवृत्ति का लक्षण है। यह कहानी अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा देती है।

11. कलुआ – 'कलुआ' कहानी इस्माइलपुर गाँव के परिवेश की है। पंडित दुर्गादत्त महापात्र के चार लड़के थे – सबके सब आवारा और शिक्षा से दूर भागने वाले। दुर्गादत्त की मृत्यु के बाद उनके तीन लड़के गाँव छोड़कर चले गये। केवल मझला लड़का श्यामसुंदर रह गया। पंडित श्यामसुंदर महापात्र के कुल आठ संताने थीं – सात लड़कियां और एकमात्र पुत्र कालीचरण महापात्र। पंडिताइन ने जब एक–एक करके छः लड़कियों को जन्म दिया था, तो उस विश्वास हो गया था कि श्यामसुंदर महापात्र में वह शक्ति नहीं है, जो उसकी कोख में एक पुत्र दे सके। इसलिए उसने पड़ोस के सुक्खा चमार से संबंध बनाया था। उसी का परिणाम था कि उसकी गोद में एक पुत्र। वही पुत्र जो अपने वास्तविक पिता सुखा चमार की तरह काला और स्वस्थ था। गाँव के लोगों में वैचारिक रूप से बहुत अधिक परिवर्तन हो चुका था। श्यामलाल राही जी ने लिखा है, 'जबसे चमारों में आंबेडकरवाद का प्रभाव पड़ा था, सब आधे–अधूरे भगवान बुद्ध के अनुयायी होने का दिखावा कर रहे थे। वे चाहे बौद्ध पूरे नहीं भी बने थे, पर मंदिर को दान आदि देने में उनकी कोई रुचि नहीं थी, न वे अब हिंदू धार्मिक कर्मकांडों पर विश्वास कर रहे थे।'[32] चौधरी हरस्वरूप चमारों में खाते–पीते परिवार के थे। वह पंडित

श्यामसुंदर के पड़ोसी थे। उन्होंने ठेकेदारी के बल पर पड़ोसी गाँव पूरनपुर की जमींदारी खरीद ली थी। श्यामसुंदर महापात्र के पुत्र कालीचरण को लोग रंग के कारण श्कलुआश कहकर पुकारते थे। हरस्वरूप चौधरी के पूरनपुर वाले खेत में एक कुआँ खोदा जा रहा था। कलुआ भी वहीं पर काम कर रहा था। कलुआ की छोटी बहन प्रतिदिन घर से खाना बनाकर उसे खेत पर पहुँचाती थी। एक दिन उसकी छोटी बहन को बुखार हुआ था। पंडिताइन ने बड़ी लड़कियों को उतनी दूर जाने नहीं दिया। इसलिए कलुआ के लिए रोटी नहीं आ सकी। जब दोपहर हुई, तो चौधरी हरस्वरूप ने भूखे कलुआ को अपनी रोटी देते हुए खाने के लिए कहा। कलुआ चुपचाप बैठा कुछ देर तक सोचता रहा, फिर भविष्य में होने वाले परिणाम की चिंता न करते हुए बोला, 'कोई देख ले तो क्या बात? कोई पूरी तो डाल नहीं देगा। फिर जिस बामन के मुझे लड़की ब्याहनी हो, न ब्याहे। मैं तो अब आपकी रोटी खाऊँगा। मेरे तो पालनहार आप ही हो।'[33] उस दिन के बाद कलुवा निरंतर चौधरी हरस्वरूप के घर की रोटी खाने लगा। उड़ते–उड़ते यह खबर गाँव पहुँची, तो ब्राह्मणों ने शोर मचाना शुरू किया कि 'एक ब्राह्मण द्वारा चमार की चाकरी, फिर उसी के घर खाना–पीना।' जब एक ब्राह्मण है श्यामसुंदर से कहा तो कि पंडित जी आपका लड़का एक चमार के घर रोटी खा रहा है तब पंडित जी ने भी खरा जवाब दिया, 'मेरा मुँह न खुलवाओ। तुम सब लोग जब कोई चमार, धोबी, हकीम–हुक्काम आ जाता है, तो क्या उसे अपने बर्तन में नहीं खिलाते? उसके जूठे बर्तन नहीं उठाते? पिछली बार जब थाने गये थे, तो उस चमार इंचार्ज दरोगा के दफ्तर में कैसे चबड़–चबड़ उसके घर से बन आई पकौड़ियाँ खा रहे थे तथा चाय सुड़क रहे थे। तब तुम्हारा ब्राह्मणपन कहाँ चला गया? देश के कानून में छुआछूत अपराध है। अगर तुम लोगों ने फिर कोई बखेड़ा खड़ा किया, तो मैं तुम्हारे खिलाफ जाति–पांति छुआछूत की रपट लिखा दूँगा।'[34] उस दिन के बाद गाँव में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया। ब्राह्मणों ने चमारों के साथ खाना–पीना आरंभ कर दिया था। गाँव के इस सांस्कृतिक परिवर्तन का श्रेय गाँव के लोग कलुआ को ही देते।

12. प्रधान– 'प्रधान' कहानी का मुख्य पात्र है – दलपत सिंह। वह सुमाली गाँव का प्रधान था। दलपत सिंह को राजनीति की अच्छी समझ थी। उसने अपने जिले के संसद से 'मुँह में राम बगल में छुरी' रखने का तरीका सीख लिया था। एक बार चुनाव के सिलसिले में जब सांसद आये थे, तो उन्होंने अपने लोगों को समझाते हुए कहा था, 'देश अब आजाद है। नेहरू जी ने आंबेडकर से जो देश का संविधान बनवाया, वह हमारे हुकूमत करने

का नया पैंतरा है। संविधान में अच्छी–अच्छी बातें लिखे बिना हमारा काम नहीं चल सकता था। प्रजा को हम मूर्ख बनाने में यूँ तो पहले से ही सिद्धहस्थ हैं, पर नये जमाने में नये हथकंडे अपनाने होंगे। हमें अपनी भाषा और व्यवहार बदलना होगा। दिखावे के लिए भाई–चारे, समता, गरीबों के उत्थान, छुआछूत मिटाने जैसे वाक्य हमें बात–बात पर कहने होंगे। गरीबों, अछूतों, पिछड़ों को सम्मान देना होगा। उनके घर जाना होगा, उनके साथ खान–पान करना होगा। यदि हम यह नहीं करेंगे, तो इस प्रजातंत्र में वोट नहीं मिलेंगे। जब वोट नहीं मिलेंगे, तो राज कैसे करेंगे।'[35] दलपत सिंह भाईचारा, नकली दिखावा, झूठे वायदे और थोड़ा सा सम्मान देकर गाँव वालों को प्रसन्न रखता था। इस प्रकार उसने अपनी प्रधानी को बरकरार रखा था। उसने धीरे–धीरे जिले के बड़े हाकिमों से जान–पहचान बढ़ाई और सांसद, विधायक निधि की बंदरबांट में शामिल हो गया। दलपत सिंह ने इतनी तरक्की कर ली, जितनी उसकी कई पीढ़ी के पुरखे नहीं कर पाये थे। श्यामलाल राही जी की कहानी 'प्रधान' उस सामाजिक सत्य की ओर संकेत करती है कि निम्न वर्ग के लोग अपनी थोड़ी सी प्रशंसा सुनकर और थोड़ा सा सम्मान पाकर इतने गदगद हो जाते हैं कि वे बहुत ही आसानी से शोषक वर्ग के चंगुल में फँस जाते हैं। इसके साथ ही यह कहानी निम्न वर्ग के लोगों को अपने मूल अधिकारों के प्रति सचेत होने के लिए भी संदेश प्रदान करती है।

13. दाई– 'दाई' कहानी की नायिका फूलमती है। वह खेमपुरवा गाँव में रहती थी। उसके तीन लड़के थे – तेजपाल, प्रेमप्रकाश और बाबूलाल। जब उसका बड़ा लड़का तेजपाल एम.ए. कर रहा था, तभी उसके पति की मृत्यु हो गयी। उसके बाद फूलमती ने दाई का कार्य करना आरंभ कर दिया था। राही जी के शब्दों में, 'आस–पड़ोस के गाँव के सवर्णों के अधिकतर युवा वे थे, जिन्हें फूलमती ने पैदा कराया था।'[36] फूलमती का बड़ा लड़का तेजपाल जब प्रशासनिक सेवा में हो गया, तो वह अपने दोनों छोटे भाइयों को भी अपने साथ ले गया। वह अपनी माँ को बार–बार दाई का काम छोड़ने को कहता। इस पर फूलमती कहती, 'जिस दिन प्रेम और बाबू काम करने लगेंगे, मैं यह काम छोड़ दूँगी।'[37] प्रेम और बाबू दोनों इंजीनियर हो गये। प्रेम दिल्ली में ही नौकरी पा गया और बाबू दुबई चला गया। चूँकि फूलमती अपने लड़कों के साथ दिल्ली में रहने के लिए तैयार नहीं थी, इसलिए बाबू ने गाँव में ही एक हवेली बनवा दी थी। फूलमती की हवेली कभी–कभी उसके बेटे–बहुओं और उनके बच्चों के आ जाने से भर जाती। वे जब तक रहते, घर में शोर–शराबा होता रहता। श्यामलाल जी के शब्दों में, 'वह अपने नाती–पोतों को गाँव की

वह चीजें स्वयं बनाकर खिलाती, जो सब कुछ होने के बाद भी शहर में पैसे से नहीं खरीदी जा सकती।'[38] श्यामलाल राही जी ने अपनी कहानी 'दाई' के माध्यम से निम्न जाति की निर्धन और निर्बल महिलाओं को निरंतर संघर्ष करते रहने की प्रेरणा दी है। फूलमती को उन्होंने एक आदर्श महिला के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसने जीवन से संघर्ष करते हुए अपने तीनों लड़कों को उच्च शिक्षा दिलाया। उसके संघर्ष का ही परिणाम था कि उसने वृद्धावस्था में हवेली का सुख प्राप्त किया। फूलमती संघर्षशील होने के साथ–साथ विनम्र, उदार, व्यवहार–कुशल और सच्चरित्र भी थी ।

14. लठैत– 'लठैत' कहानी का मुख्य पात्र और नायक चुरामन है। उसके गाँव के लोग उसे 'लठैत' कहते थे। वह अहिरोरी गाँव में रहता था। ठाकुर भूपाल सिंह की माताजी उसे अपना सातवाँ बेटा मानती थीं। भूपाल सिंह का बड़ा बेटा कुँवर राजवीर सिंह उसे चाचा–चाचा कहता था। चुरामन का पिता ठाकुर भूपाल सिंह के यहाँ कारिंदा थे। चुरामन जबसे युवक हुआ था, तबसे वह पिता की जगह ठाकुर का कारिंदा बन गया था। चुरामन की माँ बहुत सुंदर थी। गाँव वाले कहते थे कि चुरामन ठाकुर की नाजायज औलाद है। चुरामन अपने पिता की छः संतानों में सबसे बड़ा था। उसके अलावा उसकी पाँच बहनें थी, जिनकी शादी हो चुकी थी। चुरामन के चार लड़के हुए और एक लड़की। लड़की सबसे बड़ी थी। चुरामन का बड़ा बेटा लालमन शहर में एम.ए. की पढ़ाई कर रहा था। वह जब भी गाँव आता और पढ़ाई–लिखाई की बातें करता, तो उसकी बातें समझने वाला पूरे गाँव में केवल एक पंडित पोशाकी लाल ही था। गाँव के रीति–रिवाजों पर लालमन अपने पिता चुरामन से प्रायः चर्चा करता। वह कहता, 'पिताजी ! ये रीति–रिवाज जो सवर्ण समाज ने बनाये हैं, वे सब उनकी अपनी सुविधा के लिए हैं। वे हमें दबाये रखना चाहते हैं। गाँव की संपत्ति तो उन्हीं के पास है। उनके सिद्धांत में स्वयं काम करना सम्मिलित नहीं है। काम करना छोटी जातियों का काम है। बड़ी जातियाँ तो केवल सुख भोगने के लिए हैं। उनके शास्त्रों, पुराणों में तो हमें पढ़ने–लिखने, अच्छा भोजन करने, अच्छे वस्त्र पहनने का अधिकार भी नहीं है। उनके विचार से हमें जूठे भोजन, पुराने कपड़ों तथा उनकी सेवा से ही संतुष्ट होना चाहिए। वे आज भी अपनी नीतियों को साम, दाम, दंड, भेद से लागू किये हुये हैं। हमें इन्हें छोड़ना होगा।'[39] अहिरोरी गाँव में परंपरा थी कि जब किसी ठाकुर ब्राह्मण के घर शादी होती, तो अनाज की साफ–सफाई, पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था, बरात के लिए तंबू आदि लगवाना और वहाँ की साफ–सफाई का काम गाँव के चमार करते थे। बदले

में उन्हें दो–चार रुपया, कभी–कभी कोई कपड़ा तथा एक बार भोजन दे दिया जाता थे। बारात के अंतिम दिन जब सब खा लेते, तो उन्हें देर रात भोजन करने के लिए बुलाया जाता था। इस परंपरा का विरोध करते हुए लालमन ने अपने पिता से कहा, 'यह गलत है। इतने परिश्रम के बाद एक समय भोजन मिलता है, वह भी जूठा तथा बचा–कुचा। हमें ठाकुरों से कहना चाहिए कि कभी–कभी हमें सबसे पहले या बीच में भी भोजन कराया जाए।'[40] कुँवर राजवीर सिंह की बड़ी बेटी की शादी थी। चुरामन ने चमारों की 'बीच में भोजन कराने' की इच्छा राजवीर से व्यक्त कर दी। राजवीर ने अनमने ढंग से सहमति प्रदान कर दी। बारात के दिन बारातियों के खाने के बाद चमारों को भोजन के लिए बुलाया गया। खाना परोसे जाने के बाद ज्यों ही चमार खाना आरंभ किये थे कि राजवीर सिंह आया और चमारों को संबोधित करके कहा, 'सालों ! बामन बनना चाहते हो? तुम्हें सबसे पहले खाना चाहिए? अपनी–अपनी औकात भूल गये? हमारी जूतियाँ गाठने वाले, जूता चाटने वाले, हमारी जमींदारी क्या गयी, शेर हो गये? और यह हरामजादा चुरामन, जो सबकी नेतागिरी करता है, हमारे परिवार की रोटियाँ तोड़कर हमको ही आँखें दिखाने लगा है।'[41] यह कहकर राजवीर ने खाना खा रहे चुरामन को कसकर लात मारी। चुरामन अपमान के कारण अपने बेटे से आँखें नहीं मिला पा रहा था। श्यामलाल राही जी ने 'लठैत' कहानी के द्वारा ठाकुरों के क्रूर व्यवहार और कुंठित मानसिकता को रेखांकित किया है। इस कहानी के अनुसार ठाकुर जाति को रक्त से अधिक महत्व देते हैं। भले ही किसी निम्न जाति के व्यक्ति में उन्हीं का रक्त हो, लेकिन वह उस व्यक्ति के साथ उसकी जाति के आधार पर ही बर्ताव करते हैं। चूँकि लठैत के नाम से प्रसिद्ध चुरामन, ठाकुर भूपाल सिंह की अवैध पुत्र था, इसलिए रिश्ते में वह भूपाल सिंह के पुत्र राजवीर सिंह का भाई था। फिर भी राजवीर सिंह ने अपनी लड़की की शादी में भोज खिलाने के दौरान चुरामन को उसकी पूरी बिरादरी के सामने लात मारकर अपमानित किया था। इस कहानी का एक निहितार्थ यह भी है कि निम्न जाति के लोगों को ठाकुरों की चापलूसी और चमचागिरी से मुक्त होना चाहिए, क्योंकि ठाकुर उन्हें अपने पैरों की जूती के अलावा और कुछ नहीं समझते हैं।

15. परिवर्तन– 'परिवर्तन' कहानी का प्रमुख पात्र निहालचंद्र है। वह आयकर आयुक्त के पद से सेवानिवृत्त हो चुका था। वह अट्ठारह साल बाद अपने गाँव वैवाहिक कार्यक्रम में सम्मिलित होने के लिए आया था। उसके गाँव का नाम मूसेपुर है। निहालचंद्र और खुशहालचंद्र दो भाई थे। बड़े भाई

हरदोई में पटवारी थे। गाँव आने के बाद शाम को उसने गाँव का भ्रमण किया, तो देखा कि गाँव अब पहले वाला गाँव नहीं रह गया था। पूरे गाँव में पक्का खड़ंजा था। गाँव में पहले मुश्किल से चार–पाँच पक्के मकान थे, लेकिन अब लगभग आधे मकान पक्के थे। गाँव के स्कूल को उसने पास जाकर देखा। उस पर लिखा हुआ था – 'प्राथमिक पाठशाला मूसेपुर, ब्लाक – भरखनी, जिला – हरदोई।'विद्यालय के बरामदे में जगह–जगह नीति वाक्य लिखे थे, जिनके नीचे स्थान–स्थान पर कोयले से गाँव वालों ने अश्लील वाक्य लिख रखे थे, अश्लील चित्र बना रखे थे। स्कूल की अध्यापिका के चरित्र को लेकर आपत्तिजनक बातें लिखीं थीं। स्कूल के अहाते में ही उसे प्रेम सिंह मिल गया। प्रेम सिंह उसका कक्षा आठ तक का सहपाठी था, जो आठवी में फेल होने के बाद पढ़ाई छोड़ दिया था। उसके पास पर्याप्त जमीन थी। उसका पिता जमींदार था। प्रेम सिंह को देखकर वह पहचानने का जब प्रयास करने लगा, तो प्रेम सिंह ने स्वयं ही बताया, 'निहाल ! मैं प्रेम सिंह, तेरा सहपाठी।'प्रेम सिंह का इस तरह उसे 'निहाल' कहना बहुत ही अनुचित लगा। वर्षों से उसे 'साहब' या फिर 'भास्कर साहब' सुनने की आदत थी। वह नाराज होकर रूखेपन से कहा, 'तो तुम प्रेम हो, जो आठवी में फेल हो गये थे।'[42] यह बात कहकर एक प्रकार से निहालचंद्र ने अपने अपमान का बदला लिया था। अगली सुबह जब निहालचंद्र टहलकर नदी की ओर से वापस आ रहा था, तो उसकी मुलाकात प्रेम सिंह से फिर हो गयी। इस बार प्रेम सिंह ने उसे नमस्ते कहा। निहालचंद्र उसके कल के बर्ताव से प्रसन्न नहीं था, लेकिन आज उसके नमस्ते करने पर प्रसन्न हुआ और पूछा, 'कहो प्रेम सिंह ! हाल–चाल कैसे हैं? बच्चे तो ठीक–ठाक हैं?' [43] प्रेम सिंह ने बताया कि उसके चार बच्चे हैं – दो लड़के तथा दो लड़कियाँ। उसने अपनी जवानी के दिनों में असंतुलित व्यय के कारण उत्पन्न निर्धनता की स्थिति का रोना रोया और अपने लड़कों की नालायकी और आवारागर्दी का भी दुखद वर्णन किया। उसने बताया कि उसकी एक लड़की की शादी हो चुकी है और दूसरी बी.ए. कर ली है तथा उसकी नौकरी का इंटरव्यू चार–पाँच दिन बाद लखनऊ में है। विवाह का कार्यक्रम समाप्त हो जाने के बाद निहालचंद्र पूनम सिंह को साथ लेकर लखनऊ पहुँचा। लखनऊ में उसकी भव्य कोठी थी। उसने पूनम को एक कमरा दे दिया। पूनम साक्षात्कार में उत्तीर्ण हो गयी और उसे सचिवालय में नौकरी मिल गयी। निहालचंद्र का भांजा हेमंत सिंह भी उसी के साथ उसकी कोठी में रह रहा था। वह स्थानीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय में प्रवक्ता था। पूनम और हेमंत के बीच प्रेम हो गया और दोनों एक–दूसरे के साथ विवाह

करना चाहते थे। जब निहालचंद्र को यह बात पता चली, तो उसने पूनम को समझाने का प्रयास किया। चूँकि वह सुलझी हुई लड़की थी, इसलिए उसने कहा, 'ताऊ ! आप किस जमाने में जी रहे हैं? मैं तो आज अपने गाँव में देख रही हूँ। मैंने तय कर लिया कि किसी भी गाँव में ठाकुरों के लड़कों से शादी नहीं करूँगी। सब के सब नकारा, सामंती सोच, हकीकत को नकारने वाले हैं। हेमंत जी को मैं पसंद करती हूँ। यह परिवर्तन का युग है। हम यदि जाति–पांति के संकीर्ण दायरों में ही रहेंगे, तो बदलती दुनिया, विकसित होते समाज के साथ तालमेल कैसे बिठा पाएँगे? हमारी एक ही जाति है, वह है श्मानवश। मानव–मानव के बीच भेद कभी भी उचित नहीं कहा जा सकता। आप हमें बस आशीर्वाद दीजिए।'[44] अंततः पूनम और हेमंत का विवाह हो गया। उन्होंने समाजिक रुढ़ि के विरुद्ध जो कार्य किया, वही इस कहानी 'परिवर्तन' के शीर्षक की सार्थकता है। श्यामलाल राही जी ने अपनी कहानी 'परिवर्तन' के माध्यम से अंतर्जातीय विवाह को प्रोत्साहन प्रदान किया है। इस कहानी का एक महत्वपूर्ण निहितार्थ यह है कि वर्तमान पीढ़ी के युवा मानसिक रूप से अत्यधिक स्वतंत्र हैं। वे जाति और धर्म के बंधन से मुक्त होकर अपना जीवनसाथी चुनने की इच्छा रखते हैं। अतः बुजुर्गों को भी रूढ़िवादी मानसिकता से मुक्त होने की आवश्यकता है।

16. फ्रीडम फाइटर– 'फ्रीडम फाइटर' कहानी में एक वृद्ध व्यक्ति सत्रह साल की लड़की के साथ कायमगंज से कानपुर जा रही बस में सवारी कर रहा था। वह स्वतंत्रता संग्राम सेनानी वाली सीट पर बैठा हुआ था। जब कंडक्टर ने उससे बस का किराया माँगा, तो वह किराया देने से इंकार कर रहा था। वृद्ध के कागजात को देखकर कंडक्टर ने कहा, 'तुम्हारे कागजात सही हैं, पर तुम वह व्यक्ति नहीं हो, जिसके यह कागजात हैं। स्वतंत्रता संग्राम सेनानी रामप्रसाद को मरे एक अरसा हो गया है। वह जाति के धोबी थे, उनका गाँव ललैया मेरे गाँव के पास ही है। सही बात बताओ यह कागजात तथा यह ताम्रपत्र तुम्हें कहाँ से मिला?' [45] यह कहते हुए कंडक्टर ने रास्ते में पड़ने वाली फैजबाग पुलिस चौकी पर बस रोककर उसे चार सौ बीसी के जुर्म में पुलिस के हवाले करने की धमकी दिया। प्रत्युत्तर में उस वृद्ध व्यक्ति ने बस पर अतिरिक्त बोझ लादने के लिए पुलिस में रिपोर्ट लिखवाने की बात कही। कंडक्टर ने अपना सारा हिसाब ठीक बताते हुए निडरता पूर्वक रपट लिखाने किसान सहमति दी। जब उस वृद्ध ने कहा, 'हम फ्रीडम फाइटर हैं, हम किराया नहीं देंगे।'तब परिचालक ने कहा, 'यदि आप फ्रीडम फाइटर हैं, तो मेरे कुछ सवालों के जवाब देंगे?' वृद्ध तैयार हो गया। दोनों के बीच

हुआ संवाद द्रष्टव्य है –

'आपका नाम?'

'रामप्रसाद'

'पता?'

'ग्राम – ललैया, तहसील – कायमगंज, जिला – फर्रुखाबाद।'

'जाति?'

'धोबी'

'उम्र?'

'मुझे सही नहीं पता। मैं पढ़ा–लिखा नहीं हूँ।'[46]

फिर अचानक परिचालक ने लड़की से पूछा, 'तुम कौन जाति हो?' लड़की ने कहा, 'ब्राह्मण।' इस प्रकार उस नकली फ्रीडम फाइटर का भेद खुल गया। जब बस फैजबाग पुलिस चौकी के पास पहुँची, तो परिचालक बस को रुकवाकर उस वृद्ध व्यक्ति को लेकर पुलिस चौकी पर गया। पुलिस चौकी पर तैनात दरोगा ने वृद्ध को देखते ही कहा, 'आइए–आइए, शर्मा जी क्या हो गया?' परिचालक से दरोगा ने कहा, 'जबसे सरकार ने स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को निशुल्क बस यात्रा की सुविधा दी, शर्मा जी ने अपने शातिर दिमाग से खुद को रामप्रसाद बना लिया और धड़ाधड़ सफर करते हैं। अधिकतर परिचालक इनसे उलझते नहीं। यह कहते हुए दरोगा ने परिचालक से पूछा –

'आप क्या चाहते हैं?'

'ऐसा कब तक चलेगा?'

'जब तक देश में नेताओं की लूटपाट, भाई–भतीजावाद, सरकारी अफसरों की तानाशाही, कर्मचारियों की मनमानी, रिश्वतखोरी, जनता की बेईमानी चलेगी। डॉक्टर साहब की मुफ्त यात्रा सुविधा भी चलेगी।'[47] फिर भी परिचालक उस वृद्ध व्यक्ति को अपनी बस में मुफ्त सफर करवाने के लिए तैयार नहीं हुआ। अंतिम उपाय के रूप में बस में सवार कई लोगों के कहने पर उस वृद्ध का ताम्रपत्र दरोगा ने अपने कब्जे में ले लिया और फर्जी कागजात को फाड़ दिया। श्यामलाल राही जी ने अपनी कहानी 'फ्रीडम फाइटर' के माध्यम से देश में हो रहे फर्जीवाड़े की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित किया है। इस कहानी में जो दरोगा है, वह अच्छी प्रकार से उस फर्जी कागजात वाले वृद्ध को जानता है, लेकिन वह देश में हो रहे अन्य क्षेत्रों की धोखेबाजी की अपेक्षा उस फर्जी फ्रीडम फाइटर के पक्ष में अपना मत रखता है। दरोगा द्वारा करुणा और सहानुभूति का व्यवहार उसके मानवतावादी

होने का परिचायक है, किंतु इसी प्रकार मुरव्वत करने के कारण ही देश में अपराध और अत्याचार बढ़ रहे हैं। अतः यह कहानी फर्जीवाड़े को प्रोत्साहित करने वाले कारणों की ओर भी संकेत कर रही है।

17. सुशीला– 'सुशीला' कहानी की मुख्य पात्र और नायिका सुशीला नामक युवती है। जब उसने देखा कि उसके गाँव नारायणपुर के ठाकुर महिपाल सिंह का लड़का श्रीधर सिंह उसके घर में बैठा खाना खा रहा था, उसकी पुत्रवधू खाना परोस रही थी तथा उसका पुत्र व उसके भाई रूपचंद भी श्रीधर के साथ बड़े प्रेम से डाइनिंग टेबल पर भोजन कर रहे थे, तो उसे अपने बचपन की बात याद आयी। वह गर्मियों के दिनों में सुबह–सुबह अपने भाई के साथ बासी रोटी खाकर स्कूल चली जाती थी। उसके साथ उसके मुहल्ले के पाँच–छः बच्चे और थे, जिन्हें स्कूल के मास्टर पंडित जी एक अलग पंगत में बिठाते।

श्यामलाल राही जी के शब्दों में, 'स्कूल में पानी पीने के लिए एक कुआँ था, जिस पर इंटरवल में पानी पीने के लिए कुछ भीड़ हो जाती थी। जाटवों के बच्चे ज्यादातर पानी अपने घरों पर जाकर ही पीते थे। कभी बीच में अगर प्यास लगती, तो या तो प्यासे रहते या पंडित जी से कहकर किसी सवर्ण लड़के से पानी खिंचवाकर चुल्लू से पीते।'[48] जब सुशीला कक्षा तीन में थी। एक दिन उसका भैया स्कूल नहीं गया था। सुशीला इंटरवल में खाना खाने के लिए अपने घर दौड़ी चली आ रही थी। श्रीधर इंटरवल से पहले ही घर चला गया था। वह एक और लड़के के साथ एक कटोरदान में खाना लेकर वापस स्कूल जा रहा था। रास्ते में घनी झाड़ियाँ थीं, जिनके बीच में पतली पगडंडी थी। सुशीला दौड़ती हुई आ रही थी। इधर से जा रहे श्रीधर को वह हल्का सा छू गयी थी। उस समय श्रीधर ने उसे पटककर बुरी तरह पीटा था। जब उसकी उम्र बारह साल थी। श्रीधर की बड़ी बहन की शादी में वह बेगार पर गई थी। जब वह कमरे से टोकरी में गेहूँ लाने गयी, तभी श्रीधर आ गया था। कमरे में कोई और न था, औरतें दूर आँगन में थी। श्रीधर उसे पकड़कर उसके वक्ष पर हाथ फेरने लगा था। उस समय सुशीला ने चिल्लाकर उससे अपनी रक्षा की थी। उसी वर्ष सुशीला की शादी आठवीं पास परमेश्वर दयाल के साथ हो गयी। उसके पति दसवीं के बाद पॉलिटेक्निक का डिप्लोमा लेकर नौकरी पा गये थे और उन्नति करते–करते अधिशासी अभियंता के पद पर कार्यरत थे। उसका बेटा दिल्ली में आईएएस की तैयारी कर रहा था, बेटी डॉक्टर थी। सुशीला के पास शानदार कोठी, गाड़ी, पैसा सब कुछ था। विवाह होने के बाद सुशीला मायके बहुत कम गयी थी। उसे याद आया कि

पंद्रह साल पहले जब वह गाँव गयी थी, तब भी गाँव में छुआछूत था। श्रीधर और उसका परिवार अभी भी गाँव में राज कर रहे थे। सुशीला को पता चला था कि श्रीधर के लड़के ने क्लर्क के लिए उसके पति के अधीन होने वाली नियुक्ति के लिए आवेदन किया था। उसी की नौकरी लगवाने के लिए उसने सुशीला के भैया को लेकर उसके घर आया था। उसने देखा कि स्वार्थ के लिए गाँव का उसके साथ किये गये व्यवहार को भूलकर निर्लज्जतापूर्वक उसके घर खाना खा रहा था। श्यामलाल राही जी की कहानी 'सुशीला' ठाकुरों की स्वार्थपरता का भेद खोलती है। ठाकुर जिनसे छुआछूत और भेदभाव का बर्ताव करते हैं, आवश्यकता पड़ने पर उनके सामने नतमस्तक होने में भी उन्हें लाज नहीं आती है। यह कहानी तथाकथित क्षत्रिय वर्ग के लोगों के बहुरूपिया व्यवहार को प्रदर्शित करती है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि श्यामलाल राही 'प्रियदर्शी' जी का कहानी–संग्रह 'जनेऊ और मोची ठाकुर' पढ़ते समय हिंदी साहित्य का कोई सुधी पाठक उपन्यास सम्राट एवं कहानीकार प्रेमचंद का स्मरण किये बिना नहीं रह सकता है। क्योंकि राही जी की कथाशैली प्रेमचंद की कथाशैली के ही समान है। उनकी कहानियों में भी प्रेमचंद की भाँति आदर्शोन्मुख यथार्थ सन्निहित है। इस संग्रह में संग्रहीत सभी कहानियाँ सामाजिक यथार्थ को समेटे हुए हैं। साथ ही इन कहानियों से पाठक को कोई न कोई सीख अवश्य मिलती है। राही जी की कहानियाँ प्रेरक हैं, जो पाठक को सम्यक और संतुलित जीवन जीने का संदेश देती है। मनुष्य चाहे जितना भी सीधा और सच्चा हो, यदि वह जागरूक और सतर्क नहीं होता है, तो वह सदैव ठगा जाता है। इस प्रकार वह अच्छा कर्म करते हुए भी बुरा परिणाम पाता है। वंचित वर्ग के लोगों की भी यही स्थिति है। भारतीय समाज की विषमतापूर्ण व्यवस्था से अनजान रहकर इस वर्ग के लोग सदैव शोषक वर्ग द्वारा अन्याय और अत्याचार का शिकार होते रहते हैं। श्यामलाल राही जी की कहानियों को पढ़ते समय भारतीय समाज की संपूर्ण छवि पाठक की आँखों के सामने मूर्त हो जाती है।

संदर्भ

1. जनेऊ और मोची ठाकुर : श्यामलाल राही, पृष्ठ 5, प्रकाशक – लता साहित्य सदन गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश), प्रथम संस्करण 2014
2. वही, पृष्ठ 11
3. वही, पृष्ठ 12

4. वही, पृष्ठ 12
5. वही, पृष्ठ 15–16
6. वही, पृष्ठ 16
7. वही, पृष्ठ 17
8. वही, पृष्ठ 21
9. वही, पृष्ठ 22
10. वही, पृष्ठ 23
11. वही, पृष्ठ 24
12. वही, पृष्ठ 24
13. वही, पृष्ठ 24
14. वही, पृष्ठ 25–26
15. वही, पृष्ठ 26
16. वही, पृष्ठ 26
17. वही, पृष्ठ 27
18. वही, पृष्ठ 28
19. वही, पृष्ठ 29
20. वही, पृष्ठ 33
21. वही, पृष्ठ 35
22. वही, पृष्ठ 36
23. वही, पृष्ठ 41
24. वही, पृष्ठ 44
25. वही, पृष्ठ 47
26. वही, पृष्ठ 47
27. वही, पृष्ठ 50
28. वही, पृष्ठ 52–53
29. वही, पृष्ठ 53
30. वही, पृष्ठ 55–56
31. वही, पृष्ठ 59
32. वही, पृष्ठ 61–62
33. वही, पृष्ठ 63
34. वही, पृष्ठ 64
35. वही, पृष्ठ 67
36. वही, पृष्ठ 72
37. वही, पृष्ठ 72
38. वही, पृष्ठ 73

39. वही, पृष्ठ 76–77
40. वही, पृष्ठ 77
41. वही, पृष्ठ 78
42. वही, पृष्ठ 82
43. वही, पृष्ठ 83
44. वही, पृष्ठ 85
45. वही, पृष्ठ 88
46. वही, पृष्ठ 88
47. वही, पृष्ठ 90
48. वही, पृष्ठ 93